RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

राष्ट्रीय शिक्षा नीति : अध्यापक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान की भूमिका

श्री सच्चिदानन्द पाठक

असिस्टेंट प्रोफेसर, मगध कॉलेज ऑफ एजूकेशन दुबहल – गया (बिहार)

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 13 March2019

ABSTRACT

देश के सर्वांगीण एवं बहुमुखी विकास के लिए शिक्षा की परम आवश्यकता है और अच्छी शिक्षा के लिए योग्य शिक्षकों की। योग्य शिक्षकों के लिए उच्चकोटि की शिक्षा व्यवस्था की जरूरत है जो किसी उत्तम कोटि के शिक्षण संस्थान में ही सम्भव है। उत्तम कोटि के अध्यापक के द्वारा ही देश की भावी पी (बालक) के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास किया जा सकता है। सभी शिक्षक जन्मजात कुशल नहीं होते अतः शिक्षण कला में दक्षता एवं पूर्णता हेतु प्रशिक्षण आवश्यक है। भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् बड़े पैमाने पर कुशल एवं योग्य शिक्षकों की कमी को पूरा करने के लिए अध्यापक शिक्षा संस्थान स्थापित किये गये हैं। जहाँ भावी शिक्षकों का निर्माण किया जाता है। अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता को कायम रखने के लिए विभिन्न शिक्षा आयोगों ने अपनी संस्तुतियाँ प्रस्तुत की है। स्वायत्त संस्था के रूप में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद ने 1993 से अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता को बरकरार रखने के लिए कार्यरत रही है, बावजूद इसके वर्तमान समय में अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम (प्रशिक्षण) में अनेकों दोष विद्यमान हैं।

परिचय

भारत में अध्यापक शिक्षा उतना ही प्राचीन है जितना की भारतीय शिक्षा, अध्यापक शिक्षा से अभिप्राय है, अध्यापकों को शिक्षा व्यवस्था से जो एक सक्षम आत्मनिर्भर अनुशासित चरित्रवाद आदि गुणों से युक्त विद्यार्थियों के लिए आवश्यक है, उसकी उच्च कोटि की शिक्षा व्यवस्था जो न केवल पाठ्यक्रम से पूरी की जा सकती है, बल्कि उसके लिए एक सक्षम अध्यापक की आवश्यकता होती है इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु अध्यापकों को विशेष शिक्षा दिया जाता है, जिससे छात्रों का सर्वा ंगीण विकास किया जा सकें, एवं समाज में अध्यापक की निर्णायक भूमिका होती है, शिक्षा की गुणवत्ता और राष्ट्रीय विकास में शिक्षा के योगदान के लिए उत्तरदायी कारकों में से निःसन्देह सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, उसके व्यक्तित्व गुणों और चरित्र शैक्षिक योग्यताओं एवं व्यावसायिक अर्हताओं पर अन्ततः शिक्षा सम्बन्धी सभी प्रयत्नों की सफलता निर्भर है। विभिन्न स्तरों पर कार्यरत अध्यापक शिक्षकों को इस प्रकार से शिक्षित करने के लिए प्रयास किया जाता है कि आने वाली संतति को ज्ञान और मूल्यों के हस्तान्तरण के साथ ही उनके समस्त शैक्षिक और विकासात्मक दायित्वों को ग्रहण एवं वहन करने में सक्षम हो सके, और उनमें तकनीकी कुशलता वैज्ञानिक चेतना संसाधन सम्पन्नता और नवाचारिकता के साथ सांस्कृतिक उद्दीपन तथा मानवता बोध का समन्वयात्मक विकास करना संम्भव हो सकें।

अध्यापक समाज का दर्पण होता है। जिस प्रकार वह अपने शिक्षण कार्यों को अधिक रोचक एवं प्रभावशाली बनायेगा एवं अपने छात्राध्यापकों को समय पर मार्गदर्शन एवं परामर्श देने की आवश्यकता है, जिससे उनमें आत्मगौरव एवं समाज में नवीन व्यावसायिक योजनाओं हेतु अपन छात्राध्यापकों को प्रेरित करने की आवश्यकता है। आज वैश्विक समाज में शिक्षा ही वह माध्यम है। जिससे मानव कल्याण किया जा सकता है और राष्ट्र को अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में एक सूत्र में पिरोकर मानवतावादी, कल्याणकारी एवं सर्वहित की चेतना अध्यापक समाज द्वारा लाया जा सकता है। जिससे अन्तर्राष्ट्रीय बन्धुत्व की भावना का विकास किया जा सकता है।

इसलिए सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा, सेवाकालीन अध्यापकों के व्यक्तिगत, सामाजिक, नैतिक, व्यवसायिक, तथा सांस्कृतिक विकास करके अध्यापकों को विभिन्न उत्तरदायित्वों की सफलतापूर्वक व प्रभावशाली विभिन्न स्तरों पर कार्यरत अध्यापक शिक्षकों की सेवाकालीन शिक्षा की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए जैसे–स्वयं के व्यक्तित्व के विकास हेत, छात्राध्यापकों को समझने हेतु, शिक्षण एवं सामान्य शिक्षण में दक्षता हेत नवाचारी शिक्षणशास्त्र समझ के लिए, सूचना एवं सम्प्रेषण के विकास में, शिक्षा तकनीक कौशल विकास में, क्रियात्मक अनुसंधान कार्य करने हेतु तथा अन्य कौशल विकास में सेवाकालीन शिक्षा कार्यरत् अध्यापक शिक्षकों के अद्यतन ज्ञान की वृद्धि एवं शिक्षण को रोचक बनाने हेतु अधिक आवश्यक है।

सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा –

सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा अध्यापकों को शिक्षण व्यवसाय में प्रवेश करने के पश्चात् उनमें लगातार विकास के लिए उचित अनुदेशन को सुनिश्चित करने के लिए दिया जाता है। सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा द्वारा अध्यापकों के अन्दर व्यावसायिक गुणों का विकास किया जाता है, समय पर विभिन्न प्रकार की गोष्ठियों, वाद–विवादों और सेम्पोजियम इत्यादि का आयोजन किया जा रहा है, एवं सेवाकालीन

RRIJM 2015, All Rights Reserved

अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों के द्वारा ही अध्यापक अपने शिक्षण पाठ्यक्रमों में रोचकता एवं प्रभावशीलता ला सकते है। चूंकि पाठ्यक्रम निरन्तर बदल रहे है। मूल्यांकन पद्धति, श्रव्य–दृश्य अनुदेशनात्मक सामग्रियों के प्रयोग संगणक तथा मल्टीमीडिया आदि का उपयोग एवं सम्प्रेषण तकनीकों का प्रचलन आदि भी क्रमागत अधिक होता जा रहा है। अतः अध्यापकों का इन समस्त पद्धति एवं प्रयोजनों से व्यावहारिक परिचय का होना अपरिहार्य बन जाता है। बिना उपयुक्त दिशा निर्देशन प्राप्त किये वे स्वयं इन समस्त आधुनिक पद्धति और तकनीकी कुशलताओं को प्राप्त नहीं कर सकते है। इन समस्त कौशलों में पारंगत होने के लिए सेवाकालीन शिक्षा ग्रहण करना अधिक आवश्यक हो गया है। दिशा–निर्देशन तथा पुनश्चर्या पाठ्यक्रम, सम्पर्क तथा भ्रमणात्मक कार्यक्रम, एवं अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन भ्रमण, स्वप्रारम्भित अध्ययन, संगोष्ठी, कार्यशाला, सम्मेलन, आदि में सहभागिता दीर्घकालीन पाठ्यक्रम आदि अनेक ऐसे कार्यक्रमों के माध्यम से सेवाकालीन अध्यापक शिक्षक अपने ज्ञान और शिक्षण अनुभव में नवीनता उत्पन्न कर सकते है।

वर्तमान अध्यापक शिक्षा की समस्याएँ

भारत में समय पर गठिन आयोगों यथा–विश्वविद्यालय शिक्षा नीति आयोग (1948), शिक्षा आयोग (1952–53), शिक्षा आयोग (1964–65) और राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के द्वारा अध्यापक–शिक्षा की खामियों का उल्लेख किये जाने के बावजूद भी स्थिति में आशानुरूप परिवर्तन नहीं हो सका है, जैसा कि 'शिक्षा की चुनौतियाँ एक नीति संदेश (1985) नामक दस्तावेज में कहा गया ह ै कि अध्यापक शिक्षा भारत में नियोजित एव ं संगठित नहीं है।

अध्यापक शिक्षा की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं :–

सैद्धान्तिक एवं प्रयोगात्मक अध्ययन के पाठ्यक्रम मे कृत्रिमता

विभिन्न स्तरों पर अध्यापक–शिक्षा पाठ्यक्रम एवं आदर्श अति प्राचीन है। योग्य एवं प्रभावशाली अध्यापक उत्पन्न करने के लिए उचित विषयवस्तु नहीं है। विशेष विषय में सैद्धान्तिक पाठय विषयो ं का प्रयोगात्मक कार्य से कोई स्पष्ट सम्बन्ध नहीं है। विषय विषयों पर उचित दृष्टिपात नहीं किया जाता है तथा पाठ्य निर्माण का तथ्यात्मक आधार नहीं है।

अप्रभावपूर्ण शिक्षण विधियाँ

भारत वर्ष में अध्यापक शिक्षा शिक्षण विधियो ं में अन्वेषण एवं प्रयोग बहुत कम (अत्यल्प) है। वे परम्परागत शिक्षण विधियों के प्रति निष्ठावान है तथा उनकी आधुनिक कक्षा व्यवहार के तरीकों से परिचित नहीं है। जिसके कारण छात्र अध्यापक शिक्षण विधियों का सरलता एवं दक्षता के साथ प्रयोग नहीं कर पाते हैं और अप्रभावी शिक्षण के शिकार हो जाते हैं।

व्यावसायिक वृत्ति के विकास पर न्यूनतम ध्यान

सम्पूर्ण अध्यापक–शिक्षा कार्यक्रम इस प्रकार नियोजित किये जाते हैं कि, व्यावसायिक वृत्ति के विकास पर न्यूनतम ध्यान दिया जाता है, जो श्रेष्ठ अध्यापक–शिक्षा के कार्यक्रम के लिए दुर्भाग्य का विषय है। प्रदेश के सम्पूर्ण शिक्षण संस्थानों में, अध्यापक–शिक्षा कार्यक्रमों की एकरूपता के विषय में, संशय बना रहता है। संसाधन के अभाव में सम्पूर्ण कार्यक्रम नियोजित तरीके से संचालित नहीं हो पाते। फलस्वरूप अध्यापक–शिक्षा की निम्न गुणवत्ता के कारण योग्य शिक्षकों का निर्माण नहीं हो पाता है।

शिक्षण अभ्यास पर बल नहीं

शिक्षा आयोग के अनुसार अध्यापक शिक्षा प्राथमिक एवं माध्यमिक दोनों स्तरों पर विद्यालय एवं विद्यालयी शिक्षा के नवीन विकास से अलग–थलग हो गयी है। विद्यालयों में अपनाई गई शिक्षण विधियाँ, पाठ्यक्रम एव ं अन्य आवश्यकताएँ अध्यापक–शिक्षा विभागों द्वारा समर्पित एवं वास्तविक आवश्यकताओं से अलग है। आज शिक्षण अभ्यास विद्यालयों में एक दिखावा मात्र बनकर रह गया है। शिक्षण अभ्यास के लिए न तो छात्र अध्यापक को पूर्ण तैयारी करायी जाती है और नही उनमें शिक्षण कौशलों एवं दक्षताओं का विकास किया जाता है।

छात्र अध्यापकों की दुर्बल शैक्षिक आधार

वर्तमान समय में अध्यापक–शिक्षा कार्यक्रम में प्रवेश के लिए जो प्रक्रिया अपनाई जाती है उसमें पारदर्शिता का अभाव परिलक्षित होता है। वर्तमान प्रवेश प्रक्रिया के अन्तर्गत स्त्रातक/परास्त्रातक उत्तीर्ण अभ्यार्थियों के लिए 45 प्रतिशत न्यूनतम अंक निर्धारित है तदुपरान्त ही वह प्रवेश परीक्षा के योग्य माना जा सकता है। किन्तु अभी–अभी जिन अभ्यार्थियों ने अध्यापक–शिक्षा में प्रवेश लिया है, उनके प्रवेश परीक्षा में 45 प्रतिशत अंकों की उपल धता को भी दरकिनार कर दिया गया है। यहाँ स्त्रातक या परास्त्रातक स्तर के अंकों की अवहेलना स्पष्ट दिखती है। ऐसी प्रक्रिया के अन्तर्गत कमजोर शैक्षिक पृष्ठभूमि वाले छात्रों का भी प्रवेश हो जाता है। शिक्षण संस्थाओं में पर्याप्त सुविधाओ ं का अभाव अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत संस्थान संबंधी मानक एवं सुविधाओं को भी गौण कर दिया गया है, जिसके अभाव में छात्र–अध्यापकों का प्रशिक्षण कमोवेश प्रभावित हो रहा है। आज 50 प्रतिशत शिक्षण संस्थाओं के पास प्रयोगशाला, पुस्तकालय, अभ्यास विद्यालय, उपकरणों, कक्षा–कक्ष तथा संतुलित पर्यावरण एवं पाठ्यक्र क्रियाओं के लिए जगहों की कमी देखी जा रही है। भला, उपर्युक्त सुविधाओं के अभाव में एक सर्वगुण सम्पन्न अध्यापक का निर्माण कैसे हो सकता है ?

नई शिक्षा नीति

शिक्षा राष्ट्रीय नीति का एक आवश्यक उपकरण है राष्ट्रीय नीति के विकास में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है

RRIJM 2015, All Rights Reserved

यदि कोई देश अपनी राष्ट्रीय नीति लोकतंत्र के रूप में घोषित करता है तो शिक्षा में लोकतन्त्र के अनुरूप उद्देश्यों पाठ्यक्रमों एवं विधियों में परिवर्तन आवश्यक हो जाता है।

जनतन्त्र और शिक्षा –

हमारा देश 15 अगस्त सन् 1947 को आजाद हुआ और 26 जनवरी सन् 1950 को गणतन्त्र बना। वर्तमान में हमारा अपना संविधान एवं राष्ट्रीय नीतियां हैं। मुदालियर आयोग में जनतन्त्र के सन्दर्भ में शैक्षिक उद्देश्यों पर विस्तार से विचार किया है और जनतंन्त्रात्मक नागरिकता के विकास नेतृत्व के विकास एवं व्यक्तित्व के विकास पर बल दिया है।

स्वतन्त्र भारत की प्रथम शिक्षा नीति

जुलाई 1968 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा की गयी। जिसे स्वतन्त्र भारत की प्रथम शिक्षा नीति कहा जाना चाहिए। कोठारी आयोग में अपने प्रतिवेदन में एक राष्ट्रीय प्रगति को तीव्र करने के लिए सबल सुनिश्चित एवं सुविचारित शिक्षा नीति की आवश्यकता है। प्रथम शिक्षा नीति के कुछ प्रमुख बिन्दु इस प्रकार है।

निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा संविधान की 45वीं नीति निर्देशक धारा की पूर्ति हेतु 14 वर्ष तक की आयु के बालक बालिकाओं की अनिवार्य शिक्षा का उल्लेख राष्ट्रीय नीति में किया गया है।

शिक्षकों की स्थिति वेतन एवं शिक्षा शिक्षको को समाज में सम्मान पूर्ण स्थान दिलाने के लिए शिक्षक की शिक्षा एवं उसके वेतन को उन्नत करने का प्रावधान होना चाहिए।

- भाषाओं का विकास
- शैक्षिक अवसरों की समानता
- प्रतिभा की पहचान
- कार्यानुभव एवं राष्ट्र सेवा
- विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान इत्यादि ।

स्वतन्त्र भारत की द्वितीय शिक्षा नीति

स्वतन्त्र भारत की प्रथम शिक्षा नीति के पश्चात् सन् 1999 में प्रवर्तित जनता सरकार की शिक्षा नीति को इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जाना चाहिए। यह शिक्षा नीति यह स्वीकार करती है कि सभी को अपनी क्षमता के अनुरूप पूर्ण विकास का अवसर मिलना चाहिए।

इस शिक्षा नीति की मुख्य विशेषताऐं निम्न हैं

- शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को सच्ची उन्नति करने योग्य बनाना है तथा साथ ही सामाजिक कल्याण स्वतन्त्रता समानता और सामाजिक न्यायों के प्रति भी सहायक होना चाहिए ।
- शिक्षा को राष्ट्रीय बनाया जाए जिससे प्रत्येक भारतीय चाहे वह किसी भी जाति, धर्म का हो अपनी परम्परा एवं संस्कृति के प्रति गर्व कर सके।
- चौदह वर्ष तक के सभी बालक बालिकाओं को निःशुल्क सार्वजनिक अनिवार्य शिक्षा दी जाय ।
- पाठ्यक्रम तथा शिक्षण अवधि को लचीला बनाया जाय।
- त्रिभाषा सूत्र को अपनाया जाय ।

नई शिक्षा नीति का ग्रन्थालयों पर प्रभाव

भारत सरकार ने मई 1986 को नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा की थी जो कि एक प्रकार से वर्तमान स्थितियों में सभी पहलुओं से सम्बन्धित रही है। इस शिक्षा नीति में दूरस्थ शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा एवं स्वायत्तशासी महाविद्यालयों की पद्यति के अनुसरण करने पर अधिक जोर दिया गया है। इस नीति में एक नवीन शिक्षा व्यवस्था पर व्यापक रूप से विचार कर क्रियान्वयन करने पर जोर दिया गया था, अतः ग्रन्थालयों की स्थिति पर अधिक ध्यान नहीं दिया जा सका। इस राष्ट्रीय नीति में एक संक्षिप्त संस्तुति की गयी है दृ पुस्तकों के विकास के साथ ही साथ पूरे राष्ट्र में कार्यरत ग्रन्थालयों के उन्नयन एवं विकास तथा नवीन ग्रन्थालयों की स्थापना के आन्दोलन को राष्ट्रीय स्तर पर प्रारम्भ किया जायगा। सभी शिक्षा संस्थानों में ग्रन्थालय सुविधा को उपलब्ध कराने का प्रावधान किया जायगा। और ग्रन्थालियों के स्थान एवं पद को भी समुन्नत किया जायगा।

यद्यपि इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति में ग्रन्थालयों को शिक्षण संस्थाओं का महत्वपूर्ण अंग माना जाने पर भी विशेष ग्रन्थालय एवं सूचना प्रणाली नीति का उल्लेख नहीं किया गया, तथापि इसके क्रियान्वयन एवं परिपालन कार्यक्रमों के परिप्रेक्ष्य में शिक्षण संस्थाओं में ग्रन्थालयों के विकास के कुछ पक्षों पर जोर दिया गया है।

प्रमुख समितियों एवं आयोगों की ग्रन्थालय विकास एवं स्थापना की संस्तुतियाँ

ग्रन्थालयों के विकास तथा उनकी उपयोगिता वढ़ाने के दृष्टिकोण से समय–समय पर शासन द्वारा अनेक स्तरों पर तदर्थ समितियों का गठन किया जाता रहा है जिनका लक्ष्य पूर्णतः प्रकाश डालकर सुझाव एवं संस्तुतियां करना रहा है जिससे इस दिशा में समुचित कदम उठाया जा सके। ऐसी समितियों ने तत्कालीन ग्रन्थालय प्रणालियों की समीक्षा वर्तमान स्थितियों एवं आगामी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पूर्व की कमियों एवं उनके सुधारों के परिप्रेक्ष्य में अनेक सार्थक सुझाव एवं संस्तुतियां

प्रस्तुत की है। शासन द्वारा सिद्धान्तिक रूप से उन समितियों के सुझावों एवं संस्तुतियों को मान्य भी किया है। लेकिन इन समितियों की भूमिका मात्र परामर्शदायी होने के

RRIJM 2015, All Rights Reserved

कारण उनके सुझावों को शासन द्वारा क्रियान्वित करने की दिशा में अधिक ध्यान नहीं दिया। तथापि ऐसी समितियों ने ग्रन्थालय आन्दोलन तथा उनकी सेवाओं की उपादेयता की समस्याओं की ओर शासन तथा नियोजकों का ध्यान आकर्षित किया है। और आवश्यक कदम उठाने हेतु दिशा भी प्रदान की है। अतः ऐसी समितियों एवं आयोगों की संस्तुतियों, सुझावों एवं ग्रन्थालयों की वृहद समीक्षा का अवलोकन करना अति आवश्यक प्रतीत होता है। कुछ महत्वपूर्ण समितियो एवं आयोगों के योगदान का उल्लेख यहाँ संक्षेप में करना उचित होगा।

शैक्षिक ग्रन्थालय तथा इनकी समितियां एवं आयोग

भारत में सेकेण्ड्री स्कूलोंध्उच्च माध्यमिक स्कूलों में ग्रन्थालयों की ओर ब्रिटिश शासनकाल में किसी प्रकार का ध्यान नहीं दिया गया था जब कि ग्रन्थालयों की उपयोगिता से लोग सुपरिचित थे। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में सर्वप्रथम इस दिशा में ग्रन्थालयों का स्कूलों में क्या स्थान होना चाहिए उसको सुनिश्चित करने में शासन का ध्यान आकर्षित हुआ जिसे सेकेण्ड्री एजूकेशन कमीशन के अन्तरगत निर्धारण किया गया है। इस आयोग के अध्यक्ष विख्यात शिक्षाविद और चिकित्सा वैज्ञानिक मद्रास विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति डा0 ए0 लक्षमण स्वामी मुदालियर ब्रिटिश कालीन भारत के कुछ शिक्षा आयोगों में भी ग्रन्थालयों की स्थिति पर प्रकाश डाला गया है और उन्हें विकसित करने पर जोर दिया गया है।

इनमें से कुछ प्रमुख निम्नांकित हैं –

1 एजूकेशन कमीशन –

ब्रिटिश शासन काल में 1857 में विश्वविद्यालयों की स्थापना के पश्चात सर्वप्रथम उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सुधार लाने की दृष्टि से आवश्यक कदम उठाने के लिए संस्तुति एवं सुझाव प्रस्तुत करने के लिए तत्कालीन गवर्नर जनरल एवं वाइसराय लार्ड रिपन (ने 3 जनवरी 1882 को इस शिक्षा आयोग का गठन किया था। जिसका अध्यक्ष हन्टर को नियुक्त किया गया था। इस आयोग में 21 सदस्यों को पामित किया गया था।

इस आयोग ने तत्कालीन सेकेण्ड्री स्कूलों और कालेज के ग्रन्थालयों की स्थिति को इस आयोग के प्रतिवेदन में अशोचनीय अवस्था में दर्शाया गया है। और इस दिशा में आवश्यक कदम उठाने मात्र का सुझाव दिया गया है इसे हंटर कमीशन के नाम से भी जाना जाता है। लेकिन इसका क्षेत्र ग्रन्थालयों का नहीं था।

2 इण्डियन यूनिवर्सिटी कमीशन –

इसे रैले कमीशन के नाम से भी जाना जाता है। इस आयोग का गठन 27 जनवरी 1902 को तत्कालीन वाइसराय एवं गवर्नर जनरल लार्ड करजन ने किया था, जिसका अध्यक्ष रैले को नियुक्त किया गया था। इस आयोग का उद्देश्य

विश्वविद्यालयी शिक्षा में सुधार लाने एवं उन्हें विकसित करने के सुझावों एवं संस्तुतियों को प्रस्तुत करना था। जिसके परिणाम स्वरूप 1904 में इण्डियन यूनीवर्सिटी एक्ट पारित किया गया था। इस आयोग में कालेजों और विश्वविद्यालयों में ग्रन्थालयों के उत्थान की दृष्टि से सुधार लाने के लिए सन्दर्भ ग्रन्थालयों की पद्यति अपनाने पर अधिक जोर दिया गया था।

साहित्य की समीक्षा

मुदालियर आयोग (2013) से भी शैक्षिक पुनर्निर्माण में अध्यापक, उसके व्यक्तिगत गुणों, उसके व्यावसायिक प्रषिक्षण तथा उसके द्वारा विद्यालय व समाज में प्राप्त स्थान को सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्वीकार किया था। कोठारी आयोग (1964–66) ने अपने प्रतिवेदन '' शिक्षक – शिक्षा तथा राष्ट्रीय विकास'' में स्पष्ट किया है कि षिक्षा के स्तर तथा राष्ट्रीय विकास में षिक्षा के योगदान को जितनी भी बातें प्रभावित करती है उनमें अध्यापक के गुण, क्षमता व चरित्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

आर. अमधुरानी (2012)ने मान्य व स्ववितपोषित विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम का अध्ययन कर पाया कि मान्य विश्वविद्यालय का पाठ्यक्रम अधिक संतोषजनक है। 7 शिक्षा का सर्वोच्च स्तर विश्वविद्यालय की शिक्षा है विश्वविद्यालय द्वारा विभिन्न अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम जैसे – बी.एड., एम.एड. , एम.फिल. व पी.एच.डी. आदि संचालित किये जाते हैं। शिक्षा आयोग और अखिल भारतीय शिक्षक प्रशिक्षण परिषद के तत्वाधान में गठित अध्यापक शिक्षा कार्यदल ने अध्यापक प्रशिाक्षण के लक्ष्यों और उद्दश्यों को विशिद्रुप से निर्धारित किया और स्नातक स्तर के लिए आर्दा पाठ्यक्रम तैयार किया। इस कार्यदल ने सर्वप्रथम माध्यमिक अध्यापकों के प्रशिक्षण के लक्ष्यों की स्पष्ट किया है। इस सम्बन्ध में इसने लिखा है कि ''माध्यमिक अध्यापकों के पाठ्यक्रम (बी0एड0) का विशिष्ट लक्ष्य यह है कि वह माध्यमिक शालाओ के लिए प्रभावशाली शिक्षा तैयार करे।''

जी. एलगुलहाने (2014) ने महाराष्ट्र के विश्वविद्यालयों के बी.एड. पाठ्यक्रम का विश्लेषण किया तथा पाया कि महाराष्ट्र के विश्वविद्यालयों के अन्तर्गत शैक्षिक मनोविज्ञान विषय में एकरूपता नहीं पायी जाती। 15 वर्तमान समय में एन0सी0टी0ई0 ने अध्यापक शिक्षा पाठ्यचर्या प्रारुप 2009 का निर्माण किया है। जिसका आधार राष्टीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005 है राष्टीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005 में अध्यापक शिक्षा और स्कूल शिक्षा के दृष्टिकोण, संदर्भ व दृष्टि में आपसी सम्बन्ध है। दोनो का विकास एक दूसरे को पुनर्बलित करता है। जिससे शिक्षा के पूरे दायरे में आवश्यक गुणात्मक सुधार होगे। समसामयिक संदर्भो में अध्यापक शिक्षा में समावेशित शिक्षा, समता और स्थायित्व आधारित विकास का

RRIJM 2015, All Rights Reserved

दृष्टिकोण, शिक्षा मे सामुदायिक ज्ञान की भूमिका, स्कूलों मे ई लर्निंग को शामिल करना चाहिए।

अलका बिहारी ने (2015) में प्रभावशील शिक्षण की आवश्यक योग्यता के सन्दर्भ में शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम का विश्लेषण कर पाया कि संचालित पाठ्यक्रम प्रभावशाली नहीं है। 17 विभिन्न विश्वविद्यालयों के बी.एड. पाठ्यक्रम में प्रश्नपत्रों की संख्या व संयोजन, प्रकृति व विषयवस्तु के सम्बन्ध में पर्याप्त भिन्नता पाई जाती है।

एथिआउथे केथोकोनेक्सी ने (2014) में अध्यापक शिक्षा पाठ्यक्रम की समानता व विविधता सम्बन्धी अध्ययन कर निष्कर्ष स्वरूप पाया कि वर्तमान पाठ्यक्रम में संशोधन की आवश्यकता है।18 भारत सरकार द्वारा गठित कॉप समिति ने अपने प्रतिवेदन में भारतवर्ष की विभिन्न संस्थाओं के बी.एड. पाठ्यक्रम का सर्वेक्षण करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि इन पाठ्यक्रम में लगभग एक ही प्रकार के विषयों का समावेश है। छात्राध्यापकों को बी.एड. पाठ्यक्रम के द्वारा अध्यापन से सम्बद्ध विभिन्न क्रियाएं (सैद्धान्तिक, प्रायोगिक व व्यावहारिक कार्य) यथा – सैद्धान्तिक विषयों की जानकारी, विभिन्न कौशलों का प्रयोग, पाठ योजनाए तैयार करना, अभ्यास शिक्षण, सेमिनार, वर्कशॉप, विचार–विमर्श, अभिविन्यास कार्यकम, सूक्ष्म शिक्षण आदि प्रदान किये जाते है तथा शिक्षार्थी–अध्यापकों में विभिन्न क्षमताओं को विकसित करने का प्रयास किया जाता है परन्तु शिक्षण के क्षेत्र में आवश्यकता को और पैना कर दिया है।

पांडे ने (2013) में महाराष्ट्र के माध्यमिक शिक्षा पाठ्यकम का विश्लेषणात्मक अध्ययन कर पाया कि पाठ्यक्रम पारम्परिक है तथा उसमें बदलाव की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा पाठ्यचर्या (2012) ने शिक्षक– शिक्षा के आधारभूत सिद्धान्तों पर जोर दिया है और कहा है कि शिक्षक– शिक्षा कार्यक्रम शिक्षकों की व्यावसायिक तैयारी के लिए होते है न कि सामान्य, अकादमिक अध्ययन के लिए। अतः यह कार्यक्रम कठोर व उपदेशात्मक नही होना चाहिए बल्कि इसमें स्थानीय व क्षेत्रीय जरुरतों, व्यक्तिगत मतभेदों और सृजनात्मक व नये विचारों और व्यवहारो को समायोजित करने के लिए लचीलापन होना चाहिए। शिक्षक–शिक्षा के पाठ्यक्रम को सैद्धान्तिक समक्ष और उनके व्यावहारिक उपयोग में एकीकरण पर बल देना चाहिए। शिक्षा को दिशा देने के लिए भारत सरकार ने 1986 में '' शिक्षा की राष्ट्रीय नीति'' निर्गमित की जिसे बाद में 1992 में संशोधित किया गया। शिक्षा के सभी पक्षों को सम्मिलित करने वाला यह एक विस्तृत दस्तावेज है।

निष्कर्ष

ग्रन्थालयों के विकास तथा उनकी उपयोगिता वढ़ाने के दृष्टिकोण से समय–समय पर शासन द्वारा अनेक स्तरों पर तदर्थ समितियों का गठन किया जाता रहा है जिनका लक्ष्य पूर्णतः प्रकाश डालकर सुझाव एवं संस्तुतियां करना रहा है, जिससे इस दिशा में समुचित कदम उठाया जा सके। यदि अध्यापक–शिक्षा की समस्याओं के समाधान के लिए सुझाए गए उपायों पर तथ्यात्मक रूप से ध्यान दिया जाता है तो निश्चित रूप से अध्यापक–शिक्षा की शिथिलताओं को दूर कर, योग्य, कर्तव्यनिष्ठ, निष्ठावान, तथा राष्ट्र निर्माता अध्यापकों का निर्माण संभव हो सकेगा तथा भारत विश्व शिक्षा मंच पर महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेगा।

संदर्भ

1. मुदालियर आयोग (2013) : शैक्षिक प्रशासन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्रीमियर प्रन्टिंग प्रेस, जयपुर
2. आर. अमधुरानी (2012): श्रम बाजार के अनुरूप उच्च शिक्षा, योजना, अंक : 09 सितम्बर, 2009 पृष्ठ सं. 11–13
3. जी. एलगुलहाने (2014) : भारत में उच्च शिक्षा : समस्याएं एवं समाधान, योजना, अंक : 09, सितम्बर, 2009 पृष्ठ स ं. 27–30
4. अलका बिहारी ने (2015) भारत में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रम का विकास,
5. एथिआउथे केथोकोनेक्सी ने (2014) परिप्रेक्ष्य, शैक्षिक योजना एवं प्रशासन, वर्ष 14 अंक–1, अप्रैल 2007, राष्ट्रीय शैक्षिक योजना और प्रशासन संस्थान, 17 श्री अरविदों मार्ग, नई दिल्ली
6. पांडे ने (2013) : रोल ऑफ प्राइवेट सेक्टर इन हायर एजुकेशन इन इण्डिया, यूनिवर्सिटी न्यूज, 39(29), ए0आई0यू0 नई दिल्ली
7. भटनागर, आर0 पी0 एवं विद्या अग्रवाल, (2007) : शैक्षिक प्रशासन, इण्टरनेशनल पब्लिकेशन हाउस, लायल बुक डिपो, मेरठ
8. रहमान, सफी, (2008) राष्ट्रीय ज्ञान आयोग, इंडिया टुडे 25 जून 2008, पृ0 20–21
9. राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा अभियान, रिपोर्ट, पृष्ठ संख्या 8 वार्षिक रिपोर्ट–2012–13, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 2,
10. सिंह,एल0सी0, (2003) : सेल्फ फाइनेसिंग हायर एजुकेशन, यूनिवर्सिटी न्यूज 40,(40), ए0आई0य ू0, नई दिल्ली
11. बानो सरताज काजी : विद्यार्थी और शिक्षकों की गुणवत्ता वृद्धि की दिशा में प्रयत्न, भारतीय आधुनिक शिक्षा, अप्रेल 2002
12. भवालकर, स्मिता : शैक्षिक समस्याएँ एवं सुधार, एक विश्लेषण, भारतीय आधुनिक शिक्षा, अक्टूबर 2002

RRIJM 2015, All Rights Reserved